अध्याय - ३३

उदी की महिमा (१)

बिच्छू का डंक, प्लेग की गाँठ, जामनेर का चमत्कार, नारायण राव, बाला बुवा सुतार, अप्पा साहेब कुलकर्णी, हरीभाऊ कर्णिक।

पूर्व अध्याय में गुरु की महानता का दिग्दर्शन कराया गया है। अब इस अध्याय में उदी के माहात्म्य का वर्णन किया जायेगा।

प्रस्तावना

आओ, पहले हम सन्तों के चरणों में प्रणाम करें, जिनकी कृपादृष्टि मात्र से ही समस्त पापसमूह भस्म होकर हमारे आचरण के दोष नष्ट हो जायेंगे। उनसे वार्त्तालाप करना हमारे लिये शिक्षाप्रद और अति आनंददायक है। वे अपने मन में **''यह मेरा और वह तुम्हारा''** ऐसा कोई भेद नहीं रखते। इस प्रकार के भेदभाव की कल्पना उनके हृदय में कभी भी उत्पन्न नहीं होती। उनका ऋण इस जन्म में तो क्या, अनेक जन्मों में भी न चुकाया जा सकेगा।

उदी (विभूति)

यह सर्वविदित है कि बाबा सबसे दक्षिणा लिया करते थे तथा उस धन राशि में से दान करने के पश्चात् जो कुछ भी शेष बचता, उससे वे ईंधन मोल लेकर सदैव धूनी प्रज्वलित रखते थे। इसी धूनी की भस्म ही 'उदी' कहलाती है। भक्तों के शिरडी से प्रस्थान करते समय यह भस्म मुक्तहस्त से उन सभी को वितरित कर दी जाती थी।

इस उदी से बाबा हमें क्या शिक्षा देते हैं? उदी वितरण कर बाबा हमें शिक्षा देते हैं कि इस अंगारे की नाईं गोचर होने वाले ब्रह्मांड का प्रतिबिम्ब भस्म के ही समान है। हमारा तन भी ईंधन सदृश ही है, अर्थात् पंचभूतादि से निर्मित है, जो कि सांसारिक भोगादि के उपरांत विनाश को प्राप्त होकर भस्म के रूप में परिणत हो जायेगा।

भक्तों को इस बात की स्मृति दिलाने के हेतु ही कि अन्त में यह देह भस्म सदृश होने वाला है, बाबा उदी वितरण किया करते थे। बाबा इस उदी के द्वारा एक और भी शिक्षा प्रदान करते हैं कि इस संसार में ब्रह्म ही सत्य और जगत् मिथ्या है। इस संसार में वस्तुतः कोई किसी का पिता, पुत्र अथवा स्त्री नहीं है। हम जगत् में अकेले ही आये हैं और अकेले ही जायेंगे। पूर्व में यह देखने में आ चुका है और अभी भी अनुभव किया जा रहा है कि इस उदी ने अनेक शारीरिक और मानसिक रोगियों को स्वास्थ्य प्रदान किया है। यथार्थ में बाबा तो भक्तों को दक्षिणा और उदी द्वारा सत्य और असत्य में विवेक तथा असत्य के त्याग का सिद्धांत समझाना चाहते थे। इस उदी से वैराग्य और दक्षिणा से त्याग की शिक्षा मिलती है। इन दोनों के अभाव में इस मायारूपी भवसागर को पार करना कठिन है; इसलिए बाबा दूसरे के भोग स्वयं भोग कर दक्षिणा स्वीकार कर लिया करते थे। जब भक्तगण बिदा लेते, तब वे प्रसाद के रूप में उदी देकर और कुछ उनके मस्तक पर लगाकर अपना वरद-हस्त उनके मस्तक पर रखते थे। जब बाबा प्रसन्न चित्त होते, तब वे प्रेमपूर्वक गीत गाया करते थे। ऐसा ही एक भजन उदी के सम्बन्ध में भी है। भजन के बोल हैं, ''रमते राम आओ जी आओ जी, उदिया की गोनियाँ लाओजी।'' यह बाबा शुद्ध और मधुर स्वर में गाते थे।

यह सब तो उदी के आध्यात्मिक प्रभाव के सम्बन्ध में हुआ, परन्तु उसमें भौतिक प्रभाव भी था, जिससे भक्तों को स्वास्थ्य, समृद्धि, चिंतामुक्ति एवं अनेक सांसारिक लाभ प्राप्त हुए। इसलिए उदी हमें आध्यात्मिक और सांसारिक लाभ पहुँचाती है। अब हम उदी की कथाएँ प्रारम्भ करते हैं।

बिच्छू का डंक

नासिक के श्री. नारायण मोतीराम जानी बाबा के परम भक्त थे। वे बाबा के अन्य भक्त रामचंद्र वामन मोडक के अधीन काम करते थे। एक बार वे अपनी माता के साथ शिरडी गये तथा बाबा के दर्शन का लाभ उठाया। तब बाबा ने उनकी माँ से कहा कि ''अब तुम्हारे पुत्र को नौकरी छोड़कर स्वतंत्र व्यवसाय करना चाहिए।'' कुछ दिनों में बाबा के वचन सत्य निकले। नारायण जानी ने नौकरी छोड़कर एक उपाहार गृह 'आनंदाश्रम' चलाना प्रारम्भ कर दिया, जो अच्छी तरह चलने लगा। एक बार नारायण राव के एक मित्र को बिच्छू ने काट खाया, जिससे उसे असहनीय पीड़ा होने लगी। ऐसे प्रसंगों में उदी तो रामबाण प्रसिद्ध ही है। काटने के स्थान पर केवल उसे लगा ही तो देना है। नारायण ने उदी खोजी, परन्तु कहीं न मिल सकी। उन्होंने बाबा के चित्र

के समक्ष खड़े होकर उनसे सहायता की प्रार्थना की और उनका नाम लेते हुए, उनके चित्र के सम्मुख जलती हुई ऊदबत्ती में से एक चुटकी भस्म बाबा की उदी मानकर बिच्छू के डंक मारने के स्थान पर लेप कर दिया। वहाँ से उनके हाथ हटाते ही पीड़ा तुरंत मिट गई और दोनों अति प्रसन्न होकर चले गये।

प्लेग की गाँठ

एक समय एक भक्त बाँद्रा में था। उसे वहाँ पता चला कि उसकी लड़की, जो दूसरे स्थान पर है, प्लेगग्रस्त है और उसे गिल्टी निकल आई है। उनके पास उस समय उदी नहीं थी, इसलिए उन्होंने नाना चाँदोरकर के पास उदी भेजने के लिये सूचना भेजी। नानासाहेब ठाणे रेल्वे स्टेशन के समीप ही रास्ते में थे। जब उनके पास यह सूचना पहुँची, वे अपनी पत्नीसहित कल्याण जा रहे थे। उनके पास भी उस समय उदी नहीं थी। इसलिए उन्होंने सड़क पर से कुछ धूल उठाई और श्री साईबाबा का ध्यान कर उनसे सहायता की प्रार्थना की तथा उस धूल को अपनी पत्नी के मस्तक पर लगा दिया। वह भक्त खड़े-खड़े यह सब नाटक देख रहा था। जब वह घर लौटा तो उसे जानकर अति हर्ष हुआ कि जिस समय से नानासाहेब ने ठाणे रेल्वे स्टेशन के पास बाबा से सहायता करने की प्रार्थना की, तभीसे उनकी लड़की की स्थिति में पर्याप्त सुधार हो चला था, जो गत तीन दिनों से पीड़ित थी।

जामनेर का विलक्षण चमत्कार

सन् १९०४-०५ में नानासाहेब चाँदोरकर खानदेश जिले के जामनेर में मामलतदार थे। जामनेर शिरडी से लगभग १०० मील से भी अधिक दूरी पर है। उनकी पुत्री मैनाताई गर्भावस्था में थी और प्रसव काल समीप ही था। उसकी स्थिति अति गम्भीर थी। २-३ दिनों से उसे प्रसव-वेदना हो रही थी। नानासाहेब ने सभी संभव प्रयत्न किये, परन्तु वे सब व्यर्थ ही सिद्ध हुए। तब उन्होंने बाबा का ध्यान किया और उनसे सहायता की प्रार्थना की। उस समय शिरडी में एक रामगीर बुवा, जिन्हें बाबा बापूगीर बुवा के नाम से पुकारते थे, अपने घर खानदेश को लौट रहे थे। बाबा ने उन्हें अपने समीप बुलाकर कहा कि तुम घर लौटते समय थोड़ी देर के लिए जामनेर में उतरकर यह उदी और आरती श्री. नानासाहेब को दे देना। रामगीर बुवा बोले कि "मेरे पास केवल दो ही रुपये हैं, जो कठिनाई से जलगाँव तक के किराये को ही पर्याप्त होंगे। फिर ऐसी स्थिति में जलगाँव से और ३० मील आगे जाना मुझे कैसे संभव होगा?" बाबा ने उत्तर दिया कि "चिंता की कोई बात नहीं। तुम्हारी सब व्यवस्था हो जायेगी।" तब बाबा

ने शामा से माधव अडकर द्वारा रचित प्रसिद्ध आरती की प्रतिलिपि कराई और उदी के साथ नानासाहेब के पास भेज दी। बाबा के वचनों पर विश्वास कर रामगीर बुवा ने शिरडी से प्रस्थान कर दिया और पौने तीन बजे रात्रि को जलगाँव पहुँचे। इस समय उनके पास केवल दो आने ही शेष थे, जिससे वे बड़ी दुविधा में थे। इतने में ही एक आवाज़ उनके कानों में पड़ी कि "शिरडी से आये हुए बापूगीर बुवा कौन हैं?" उन्होंने आगे बढ़कर बतलाया कि "मैं ही शिरडी से आ रहा हूँ और मेरा ही नाम बापूगीर बुवा है।" उस चपरासी ने, जो कि अपने आपको नानासाहेब चाँदोरकर द्वारा भेजा हुआ बतला रहा था, उन्हें बाहर लाकर एक शानदार ताँगे में बिठाया, जिसमें दो सुन्दर घोड़े जुते हुए थे। अब वे दोनों रवाना हो गये। ताँगा बहुत वेग से चल रहा था। प्रातःकाल वे एक नाले के समीप पहुँचे, जहाँ ताँगेवाले ने ताँगा रोककर घोड़ों को पानी पिलाया। इसी बीच चपरासी ने रामगीर बुवा से थोड़ा सा नाश्ता करने को कहा। उसकी दाढ़ी-मूछें तथा अन्य वेशभूषा से उसे मुसलमान समझकर उन्होंने जलपान करना अस्वीकार कर दिया। तब उस चपरासी ने कहा कि मैं गढ़वाल का क्षत्रिय वंशी हिन्दू हूँ। यह सब नाश्ता नानासाहेब ने आपके लिए ही भेजा है तथा इसमें आपको कोई आपत्ति और संदेह नहीं करना चाहिए। तब वे दोनों जलपान कर पुनः रवाना हुए और सूर्योदय काल में जामनेर पहुँच गये। रामगीर बुवा लघुशंका को गये और थोड़ी देर में जब वे लौटकर आये तो क्या देखते हैं कि वहाँ न तो ताँगा था, न ताँगेवाला और न ही ताँगे के घोड़े। उनके मुख से एक शब्द भी न निकल रहा था। वे समीप ही कचहरी में पूछताछ करने गये और वहाँ उन्हें पता चला कि इस समय मामलतदार घर पर ही हैं। वे नानासाहेब के घर गये और उन्हें बतलाया कि "मैं शिरडी से बाबा की आरती और उदी लेकर आ रहा हूँ।" उस समय मैनाताई की स्थिति बहुत ही गंभीर थी और सभी को उसके लिए बड़ी चिंता थी। नानासाहेब ने अपनी पत्नी को बुलाकर उदी को जल में मिलाकर अपनी लड़की को पिला देने और आरती करने को कहा। उन्होंने सोचा कि बाबा की सहायता बड़ी सामयिक है। थोड़ी देर में ही समाचार प्राप्त हुआ कि प्रसव कुशलतापूर्वक होकर समस्त पीड़ा दूर हो गई है। जब रामगीर बुवा ने नानासाहेब को चपरासी, ताँगा तथा जलपान आदि रेलवे स्टेशन पर भेजने के लिए धन्यवाद दिया तो नानासाहेब को यह सुनकर महान् आश्चर्य हुआ और वे कहने लगे कि मैंने न तो कोई ताँगा या चपरासी ही भेजा था और न ही मुझे शिरडी से आपके पधारने की कोई पूर्वसूचना ही थी।

ठाणे के सेवानिवृत्त श्री. बी.व्ही. देव ने नानासाहेब चाँदोरकर के पुत्र बापूसाहेब चाँदोरकर और शिरडी के रामगीर बुवा से इस सम्बन्ध में बड़ी पूछताछ की और फिर

संतुष्ट होकर श्री साईलीला पत्रिका, भाग १३ (नं ११,१२,१३) **में गद्य और पद्य में एक** सुन्दर रचना प्रकाशित की। भाई श्री. बी.व्ही. नरसिंह स्वामी ने भी (१) मैनाताई (भाग ५, पृष्ठ १४), (२) बापूसाहेब चाँदोरकर (भाग २०, पृष्ठ ५०) और (३) रामगीर बुवा (भाग २७, पृष्ठ ८३) के कथन लिए हैं, जो कि क्रमशः १ जून १९३६, १६ सितम्बर १९३६ और १ दिसम्बर १९३६ को छपे हैं और यह सब उन्होंने अपनी पुस्तक "भक्तों के अनुभव" भाग ३ में प्रकाशित किये हैं। निम्नलिखित प्रसंग रामगीर बुवा के कथनानुसार उद्धृत किया जाता है।

"एक दिन मुझे बाबा ने अपने समीप बुलाकर एक उदी की पुड़िया और एक आरती की प्रतिलिपि देकर आज्ञा दी कि जामनेर जाओ और यह आरती तथा उदी नानासाहेब को दे दो। मैंने बाबा को बताया कि मेरे पास केवल दो रुपये ही हैं, जो कि कोपरगाँव से जलगाँव जाने और फिर वहाँ से बैलगाड़ी द्वारा जामनेर जाने के लिए अपर्याप्त हैं। बाबा ने कहा "अल्ला देगा।" शुक्रवार का दिन था। मैं शीघ्र ही रवाना हो गया। मैं मनमाड ६-३० बजे सायंकाल और जलगाँव रात्रि को २ बजकर ४५ मिनट पर पहुँचा। उस समय प्लेग निवारक आदेश जारी थे, जिससे मुझे असुविधा हुई और मैं सोच रहा था कि कैसे जामनेर पहुँचूँ। रात्रि को ३ बजे एक चपरासी आया, जो पैर में बूट पहिने था, सिर पर पगड़ी बाँधे व अन्य पोशाक भी पहने था। उसने मुझे ताँगे में बिठा लिया और ताँगा चल पड़ा। मैं उस समय भयभीत-सा हो रहा था। मार्ग में भगूर के समीप मैंने जलपान किया। जब प्रातःकाल जामनेर पहुँचा, तब उसी समय मुझे लघुशंका करने की इच्छा हुई। जब मैं लौटकर आया, तब देखा कि वहाँ कुछ भी नहीं है। ताँगा और ताँगेवाला अदृश्य हैं।"

नारायणराव

भक्त नारायणराव को बाबा के दर्शनों का तीन बार सौभाग्य प्राप्त हुआ। सन् १९१८ में बाबा के महासमाधि लेने के तीन वर्ष पश्चात् वे शिरडी जाना चाहते थे, परन्तु किसी कारणवश उनका जाना न हो सका। बाबा के समाधिस्थ होने के एक वर्ष के भीतर ही वे रुग्ण हो गये। किसी भी उपचार से उन्हें लाभ न हुआ। तब उन्होंने आठों प्रहर बाबा का ध्यान करना प्रारंभ कर दिया। एक रात को उन्हें स्वप्न हुआ। बाबा एक गुफा में से उन्हें आते हुए दिखाई पड़े और सांत्वना देकर कहने लगे कि "घबड़ाओ नहीं, तुम्हें कल से आराम हो जायेगा और एक सप्ताह में ही चलने-फिरने लगोगे।" ठीक उतने ही समय में नारायणराव स्वस्थ हो गये। अब यह प्रश्न विचारणीय है कि क्या बाबा

देहधारी होने से जीवित कहलाते थे और क्या उन्होंने देह त्याग दी, इसलिए मृत हो गये? नहीं। बाबा अमर हैं, क्योंकि वे जीवन और मृत्यु से परे हैं। **एक बार भी अनन्य भाव से जो उनकी शरण में जाता है, वह कहीं भी हो, उसे वे सहायता पहुँचाते हैं। वे तो सदा हमारे बाजू में ही खड़े हैं और चाहे जैसा रूप लेकर भक्त के समक्ष प्रकट होकर उसकी इच्छा पूर्ण कर देते हैं।**

अप्पासाहेब कुलकर्णी

सन् १९१७ में अप्पासाहेब कुलकर्णी के शुभ दिन आये। उनका ठाणे को स्थानांतरण हो गया। उन्होंने बालासाहेब भाटे द्वारा प्राप्त बाबा के चित्र का पूजन करना आरम्भ कर दिया। उन्होंने सच्चे हृदय से पूजा की। वे हर दिन फूल, चन्दन और नैवेद्य बाबा को अर्पित करते और उनके दर्शनों की बड़ी अभिलाषा रखते थे। इस सम्बन्ध में इतना तो कहा जा सकता है कि **उत्सुकतापूर्वक बाबा के चित्र को देखना ही बाबा के प्रत्यक्ष दर्शन के सदृश है।** नीचे लिखी कथा से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

बालाबुवा सुतार

बम्बई में एक बालाबुवा नाम के संत थे, जो कि अपनी भक्ति, भजन और आचरण के कारण 'आधुनिक तुकाराम' के नाम से विख्यात थे। सन् १९१७ में वे शिरडी आये। जब उन्होंने बाबा को प्रणाम किया तो बाबा कहने लगे कि मैं तो इन्हें चार वर्षों से जानता हूँ। बालाबुवा को आश्चर्य हुआ और उन्होंने सोचा कि मैं तो प्रथम बार ही शिरडी आया हूँ, फिर यह कैसे संभव हो सकता है? गहन चिन्तन करने पर उन्हें स्मरण हुआ कि चार वर्ष पूर्व उन्होंने बम्बई में बाबा के चित्र को नमस्कार किया था। उन्हें बाबा के शब्दों की यथार्थता का बोध हो गया और वे मन ही मन कहने लगे कि संत कितने सर्वव्यापक और सर्वज्ञानी होते हैं तथा अपने भक्तों के प्रति उनके हृदय में कितनी दया होती है। मैंने तो केवल उनके चित्र को ही नमस्कार किया था तो भी यह घटना उनको ज्ञात हो गई। इसलिये उन्होंने मुझे इस बात का अनुभव कराया है कि **उनके चित्र को देखना ही उनके दर्शन करने के सदृश है।**

अब हम अप्पासाहेब की कथा पर आते हैं। जब वे ठाणे में थे तो उन्हें भिवंडी दौरे पर जाना पड़ा, जहाँ से उन्हें एक सप्ताह में लौटना संभव न था। उनकी अनुपस्थिति में तीसरे दिन उनके घर में निम्नलिखित विचित्र घटना हुई। दोपहर के समय अप्पासाहेब के गृह पर एक फकीर आया, जिसकी आकृति बाबा के चित्र से ही मिलती-जुलती थी।

श्रीमती कुलकर्णी तथा उनके बच्चों ने उनसे पूछा कि आप शिरडी के श्रीसाईबाबा तो नहीं हैं? इस पर उत्तर मिला कि वे तो साईबाबा के आज्ञाकारी सेवक हैं और उनकी आज्ञा से ही आप लोगों की कुशल-क्षेम पूछने यहाँ आये हैं। फकीर ने दक्षिणा माँगी तो श्रीमती कुलकर्णी ने उन्हें एक रुपया भेंट किया। तब फकीर ने उन्हें उदी की एक पुड़िया देते हुए कहा कि इसे अपने पूजन में चित्र के साथ रखो। इतना कहकर वह वहाँ से चला गया। अब बाबा की अद्‌भुत लीला सुनिये।

भिवंडी में अप्पासाहेब का घोड़ा बीमार हो गया, जिससे वे दौरे पर आगे न जा सके। तब उसी शाम को वे घर लौट आये। घर आने पर उन्हें पत्नी के द्वारा फकीर के आगमन का समाचार प्राप्त हुआ। उन्हें मन में थोड़ी अशांति-सी हुई कि मैं फकीर के दर्शनों से वंचित रह गया तथा पत्नी द्वारा केवल एक रुपया दक्षिणा देना उन्हें अच्छा न लगा। वे कहने लगे कि यदि मैं उपस्थित होता तो १० रुपये से कम कभी न देता। तब वे फिर भूखे ही फकीर की खोज में निकल पड़े। उन्होंने मसजिद एवं अन्य कई स्थानों पर खोज की, परन्तु उनकी खोज व्यर्थ ही सिद्ध हुई। पाठक अध्याय ३२ में कहे गये बाबा के वचनों का स्मरण करें कि **भूखे पेट ईश्वर की खोज नहीं करनी चाहिए।** अप्पासाहेब को शिक्षा मिल गई। वे भोजन के उपरांत जब अपने मित्र श्री. चित्रे के साथ घूमने को निकले, तब थोड़ी ही दूर जाने पर उन्हें सामने से एक फकीर द्रुत गति से आता हुआ दिखाई पड़ा। अप्पासाहेब ने सोचा कि यह तो वही फकीर प्रतीत होता है, जो मेरे घर पर आया था तथा उसकी आकृति भी बाबा के चित्र के अनुरूप ही है। फकीर ने तुरन्त ही हाथ बढ़ाकर दक्षिणा माँगी। अप्पासाहेब ने उन्हें एक रुपया दे दिया, तब वह और माँगने लगा। अब अप्पासाहेब ने दो रुपये दिये। तब भी उसे संतोष न हुआ। उन्होंने अपने मित्र चित्रे से ३ रुपये उधार लेकर दिये, फिर भी वह माँगता ही रहा। तब अप्पासाहेब ने उसे घर चलने को कहा। सब लोग घर पर आये और अप्पासाहेब ने उन्हें ३ रुपये और दिये अर्थात् कुल ९ रुपये; फिर भी वह असन्तुष्ट प्रतीत होता था और माँगे ही जा रहा था। तब अप्पासाहेब ने कहा कि मेरे पास तो १० रुपये का नोट है। तब फकीर ने नोट ले लिया और ९ रुपये लौटाकर चला गया। अप्पासाहेब ने १० रुपये देने को कहा था, इसलिए उनसे १० रुपये ले लिये और बाबा द्वारा स्पर्शित ९ रुपये उन्हें वापस मिल गये। अंक ९ रुपये अर्थपूर्ण हैं तथा नवविधा भक्ति की ओर इंगित करते हैं (देखो अध्याय २१)। यहाँ ध्यान दें कि लक्ष्मीबाई को भी उन्होंने अंत समय में ९ रुपये ही दिये थे।

उदी की पुड़िया खोलने पर अप्पासाहेब ने देखा कि उसमें फूल के पत्ते और अक्षत हैं। जब वे कालान्तर में शिरडी गये तो उन्हें बाबा ने अपना एक केश भी दिया। उन्होंने उदी और केश को एक ताबीज में रखा और उसे वे सदैव हाथ पर बाँधते थे। अब अप्पासाहेब को उदी की शक्ति विदित हो चुकी थी। वे कुशाग्र बुद्धि के थे। प्रथम उन्हें ४० रुपये मासिक मिलते थे, परंतु बाबा की उदी और चित्र प्राप्त होने के पश्चात् उनका वेतन कई गुना हो गया तथा उन्हें मान और यश भी मिला। इन अस्थायी आकर्षणों के अतिरिक्त उनकी आध्यात्मिक प्रगति भी शीघ्रता से होने लगी। इसलिए **सौभाग्यवश जिनके पास उदी है, उन्हें स्नान करने के पश्चात् मस्तक पर धारण करना चाहिए और कुछ जल में मिलाकर वह तीर्थ की नाईं ग्रहण करना चाहिए।**

हरीभाऊ कर्णिक

सन् १९१७ में गुरु पूर्णिमा के शुभ दिन डहाणू, जिला ठाणे के हरीभाऊ कर्णिक शिरडी आये तथा उन्होंने बाबा का यथाविधि पूजन किया। उन्होंने वस्तुएँ और दक्षिणा आदि भेंट कर शामा के द्वारा बाबा से लौटने की आज्ञा प्राप्त की। वे मसजिद की सीढ़ियों पर से उतरे ही थे कि उन्हें विचार आया कि एक रुपया और बाबा को अर्पण करना चाहिए। वे शामा को संकेत से यह सूचना देना चाहते थे कि बाबा से जाने की आज्ञा प्राप्त हो चुकी है, इसलिए मैं लौटना नहीं चाहता हूँ। परन्तु शामा का ध्यान उनकी ओर नहीं गया, इसलिए वे घर को चल पड़े। मार्ग में वे नासिक में श्री कालाराम के मंदिर में दर्शनों को गये। संत नरसिंह महाराज, जो कि मंदिर के मुख्य द्वार के भीतर बैठा करते थे, भक्तों को वहीं छोड़ कर हरीभाऊ के पास आये और उनका हाथ पकड़कर कहने लगे कि "मुझे मेरा रुपया दे दो।" कर्णिक को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने सहर्ष रुपया दे दिया। उन्हें विचार आया कि मैंने बाबा को रुपया देने का मन में संकल्प किया था और बाबा ने यह रुपया नासिक के नरसिंह महाराज के द्वारा ले लिया। इस कथा से सिद्ध होता है कि **सब संत अभिन्न हैं तथा वे किसी न किसी रूप में एक साथ ही कार्य किया करते हैं।**

॥ श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥

अध्याय - ३४

उदी की महत्ता (२)

(१) डॉक्टर का भतीजा (२) डॉक्टर पिल्ले (३) शामा की भयाहू (४) ईरानी कन्या, (५) हरदा के महानुभाव (६) बम्बई की महिला की प्रसव पीड़ा

इस अध्याय में भी उदी की ही महत्ता क्रमबद्ध है तथा उन घटनाओं का भी उल्लेख किया गया है, जिनमें उसका उपयोग बहुत ही प्रभावकारी सिद्ध हुआ।

डॉक्टर का भतीजा

नासिक जिले के मालेगाँव में एक डॉक्टर रहते थे। उनका भतीजा एक असाध्य रोग Tubercular bone abscess (एक प्रकार का तपेदिक) से पीड़ित था। उन्होंने तथा उनके सभी डॉक्टर मित्रों ने समस्त उपचार किये। यहाँ तक कि उसकी शल्य-चिकित्सा भी कराई, फिर भी बालक को कोई लाभ न हुआ। उसके कष्टों का पारावार न था। मित्र और सम्बन्धियों ने बालक के माता-पिता को दैविक उपचार करने का परामर्श देकर श्री साईबाबा की शरण में जाने को कहा, जो अपनी दृष्टि मात्र से असाध्य रोग साध्य करने के लिये प्रसिद्ध हैं। अतः माता-पिता बालक को साथ लेकर शिरडी आये। उन्होंने बाबा को साष्टांग प्रणाम कर श्री-चरणों में बालक को डाल दिया और बड़ी नम्रता तथा आदरपूर्वक विनती की कि "प्रभु, हम लोगों पर दया करो। आपका 'संकट-मोचन' नाम सुनकर ही हम लोग यहाँ आये हैं। दया कर इस बालक की रक्षा कीजिये। प्रभु! हमें तो केवल आपका ही भरोसा है।" प्रार्थना सुनकर बाबा को दया आ गई और उन्होंने सान्त्वना देकर कहा कि "**जो इस मसजिद की सीढ़ी चढ़ता है, उसे जीवनपर्यन्त कोई दुःख नहीं होता। चिंता न करो; यह उदी ले उस रोग ग्रसित स्थान पर लगाओ। ईश्वर पर विश्वास रखो, वह सप्ताह के अंत में ही पूर्ण स्वस्थ हो जायेगा। यह मसजिद नहीं, यह तो द्वारकावती है और जो**

इसकी सीढ़ी चढ़ेगा, उसे स्वास्थ्य और सुख की प्राप्ति होगी तथा उसके कष्टों का अंत हो जायेगा।" बालक को बाबा के सामने बिठलाया गया। वे उस रोगग्रस्त स्थान पर अपना हाथ फेरते हुये दयापूर्ण दृष्टि से बालक की ओर निहारने लगे। रोगी अब प्रसन्न रहने लगा और उदी के लेप से बालक थोड़े समय में ही स्वस्थ हो गया। माता-पिता अपने को बाबा का ऋणी और कृतज्ञ मानकर बालक को लेकर शिरडी से चले गये।

यह लीला देखकर बालक के काका को, जो डॉक्टर थे, महान् आश्चर्य हुआ तथा उन्हें भी बाबा के दर्शनों की तीव्र उत्कंठा हुई। इसी समय जब वे कार्यवश बम्बई जा रहे थे, तभी मालेगाँव और मनमाड के निकट किसी ने बाबा के विरुद्ध उनके कान भर दिये, इस कारण वे शिरडी जाने का विचार त्याग कर सीधे बम्बई चले गये। वे अपनी शेष छुट्टियाँ अलीबाग में व्यतीत करना चाहते थे, परंतु बम्बई में उन्हें लगातार तीन रात्रियों तक एक ही ध्वनि सुनाई पड़ी कि "क्या अब भी तुम मुझपर अविश्वास कर रहे हो?" तब डॉक्टर ने अपना विचार परिवर्तित कर शिरडी को प्रस्थान करने का निश्चय किया। बम्बई में उनके एक रोगी को सांसर्गिक ज्वर आ रहा था, जिसका तापक्रम कम होने का कोई चिह्न दिखाई न देने के कारण उन्हें ऐसा लग रहा था कि कहीं शिरडी की यात्रा स्थगित न करनी पड़े। उन्होंने अपने मन ही मन एक परीक्षा करने का विचार किया कि यदि रोगी आज अच्छा हो जाये तो कल ही मैं शिरडी के लिये प्रस्थान कर दूँगा। आश्चर्य है कि जिस समय उन्होंने यह निश्चय किया, ठीक उसी समय से ज्वर में उतार होने लगा और ताप क्रमशः साधारण स्थिति पर पहुँच गया। तब वे अपने निश्चयानुसार शिरडी पहुँचे और बाबा का दर्शन करके उन्हें प्रणाम किया। बाबा ने उन्हें कुछ ऐसे अनुभव दिये कि वे सदा के लिये उनके भक्त हो गये। डॉक्टर वहाँ चार दिन ठहरे और उदी तथा आशीर्वाद प्राप्त कर घर वापस आ गये। एक पखवारे में ही पदोन्नति पाकर उनका स्थानान्तरण वीजापुर को हो गया। भतीजे की रोग-मुक्तता ने उन्हें बाबा के दर्शनों का सौभाग्य दिया तथा शिरडी की यात्रा ने उनकी श्रीसाई के चरणों में प्रगाढ़ प्रीति उत्पन्न कर दी।

डॉक्टर पिल्ले

डॉक्टर पिल्ले बाबा के एकनिष्ठ भक्त थे। इसी कारण वे उन पर अधिक स्नेह रखते थे और उन्हें सदा 'भाऊ' कहकर पुकारते तथा हर समय उनसे वार्त्तालाप करके प्रत्येक विषय में परामर्श भी लिया करते थे। उनकी सदैव यही इच्छा रहती कि वे बाबा के समीप

ही बने रहें। एक बार डॉक्टर पिल्ले को नासूर हो गया। वे काकासाहेब दीक्षित से बोले कि मुझे असह्य पीड़ा हो रही है और मैं अब इस जीवन से मृत्यु को अधिक श्रेयस्कर समझता हूँ। मुझे ज्ञात है कि इसका मुख्य कारण मेरे पूर्व जन्मों के कर्म ही हैं। जाकर बाबा से कहो कि वे मेरी यह पीड़ा अब दूर करें। मैं अपने पिछले जन्म के कर्मों को अगले दस जन्मों में भोगने को तैयार हूँ। तब काका दीक्षित ने बाबा के पास जाकर उनकी प्रार्थना सुनाई। साई तो दया के अवतार ही हैं। वे अपने भक्तों के कष्ट कैसे देख सकते थे? उनकी प्रार्थना सुनकर उन्हें भी दया आ गई और उन्होंने दीक्षित से कहा कि पिल्ले से जाकर कहो कि घबड़ाने की ऐसी कोई बात नहीं। कर्मों का फल दस जन्मों में क्यों भुगतना पड़ेगा? केवल दस दिनों में ही गत जन्मों के कर्मफल समाप्त हो जायेंगे। मैं तो यहाँ तुम्हें धार्मिक और आध्यात्मिक कल्याण देने के लिये ही बैठा हूँ। **प्राण त्यागने की इच्छा कदापि न करनी चाहिये।** जाओ, किसी की पीठ पर लादकर उन्हें यहाँ ले आओ, मैं सदा के लिये उनका कष्टों से छुटकारा कर दूँगा।

तब उसी स्थिति में पिल्ले को वहाँ लाया गया। बाबा ने अपने दाहिनी ओर उनके सिरहाने अपनी गादी देकर सुख से लिटाकर कहा कि इसकी मुख्य औषधि तो यह है कि पिछले जन्मों के कर्मफल को अवश्य ही भोग लेना चाहिये, ताकि उनसे सदैव के लिये छुटकारा हो जाय। हमारे कर्म ही सुख दुःख के कारण होते हैं, इसलिये जैसी भी परिस्थिति आये, उसी में सन्तोष करना चाहिए। अल्ला ही सब को फल देने वाला है और वही सबका रक्षण करता है। ऐसा विचार कर सदैव उनका ही स्मरण करो। वे ही तुम्हारी चिन्ता दूर करेंगे। तन-मन-धन और वचन द्वारा उनकी अनन्य शरण में जाओ, फिर देखो कि वे क्या करते हैं। डॉक्टर पिल्ले ने कहा कि नानासाहेब ने मेरे पैर में एक पट्टी बाँधी है, परन्तु मुझे उससे कोई लाभ नहीं पहुँचा। "नाना तो मूर्ख है" बाबा ने कहा, "वह पट्टी हटाओ, नहीं तो मर जाओगे। थोड़ी देर में ही एक कौआ आयेगा और वह अपनी चोंच इसमें मारेगा। तभी तुम शीघ्र अच्छे हो जाओगे।"

जब यह वार्तालाप हो ही रहा था कि उसी समय अब्दुल, जो मसजिद में झाड़ू लगाने तथा दिया-बत्ती आदि स्वच्छ करने का कार्य करता था, वहाँ आया। जब वह दिया-बत्ती स्वच्छ कर रहा था तो अचानक ही उसका पैर डॉक्टर पिल्ले के नासूर वाले पैर पर पड़ा। पैर तो सूजा हुआ था ही और फिर अब्दुल के पैर से दबा तो उसमें से नासूर के सात कीड़े बाहर निकल पड़े। कष्ट असहनीय हो गया और डॉक्टर पिल्ले उच्च स्वर में चिल्ला पड़े। किन्तु कुछ काल के ही पश्चात् वे शांत हो कर गीत गाने लगे। तब बाबा ने कहा,

"देखा, भाऊ अब अच्छा हो गया है और गाना गा रहा है।" गाने के बोल थेः-

करम कर मेरे हाल पर तू करीम।
तेरा नाम रहमान है और रहीम।
तू ही दोनों आलम का सुलतान है।
जहाँ में नुमायाँ तेरी शान है।
फना होने वाला है सब कारोबार।
रहे नूर तेरा सदा आशकार।
तू आशिक का हरदम मददगार है।

फिर डॉक्टर पिल्ले ने पूछा कि "वह कौआ कब आयेगा और चोंच मारेगा?" बाबा ने कहा "अरे, क्या तुमने कौए को नहीं देखा? अब वह नहीं आयेगा। अब्दुल, जिसने तुम्हारा पैर दबाया, वही कौआ था। उसने चोंच मारकर नासूर को हटा दिया। वह अब पुनः क्यों आयेगा? अब जाकर वाड़े में विश्राम करो। तुम शीघ्र ही स्वस्थ हो जाओगे।"

उदी लगाने और पानी के संग पीने से बिना किसी औषधि या चिकित्सा के वे दस दिनों में ही नीरोग हो गये, जैसा कि बाबा ने उनसे कहा था।

शामा के छोटे भाई की पत्नी (भयाहू)

सावली विहीर के समीप शामा के छोटे भाई बापाजी रहते थे। एक बार उनकी पत्नी को गिल्टियों वाला प्लेग हो गया। उसे ज्वर हो आया और उसकी जाँघ में प्लेग की दो गिल्टियाँ निकल आईं। बापाजी दौड़कर शामा के पास आये और सहायता के लिये चलने को कहा। शामा भयभीत हो उठे। उन्होंने सदैव की भाँति बाबा के पास जाकर उन्हें नमस्कार किया और सहायता के लिये उनसे प्रार्थना की तथा भ्राता के घर प्रस्थान करने की अनुमति माँगी। बाबा ने कहा कि इतनी रात्रि व्यतीत हो चुकी है। अब इस समय तुम कहाँ जाओगे? केवल उदी ही भेज दो। ज्वर और गिल्टी की चिन्ता क्यों करते हो? भगवान् तो अपने पिता और स्वामी हैं। वह शीघ्र ही स्वस्थ हो जायेगी। अभी मत जाओ। प्रातःकाल जाना और शीघ्र ही लौट आना।

शामा को तो उस मृत-संजीवनी 'उदी' पर पूर्ण विश्वास था। उसे ले जाकर उसके भ्राता ने थोड़ी सी गिल्टी और माथे पर लगाई और कुछ जल में घोलकर रोगी को पिला

दी। जैसे ही उसका सेवन किया गया, वैसे ही पसीना वेग से प्रवाहित होने लगा, ज्वर मन्द पड़ गया और रोगी प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न हो गया। दूसरे दिन बापाजी ने अपनी पत्नी को स्वस्थ देखकर बड़ा आश्चर्य प्रकट किया कि न तो ज्वर ही है और न गिल्टी का कोई चिह्न ही। दूसरे दिन जब शामा बाबा की अनुज्ञा प्राप्त कर वहाँ पहुँचे तो अपने भाई की स्त्री को चाय बनाते देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। अपने भाई से पूछताछ करने पर उन्हें पता चला कि बाबा की उदी ने एक रात्रि में ही रोग को समूल नष्ट कर दिया है। तब शामा को बाबा के शब्दों का मर्म समझ में आया कि "प्रातःकाल जाओ और शीघ्र लौटकर आओ।"

चाय पीकर शामा लौट आया और बाबा को प्रणाम करने के पश्चात् कहने लगा कि "देवा! यह तुम्हारा क्या नाटक है? पहले बवंडर उठा कर हमें अशांत कर देते हो, फिर हमारी शीघ्र सहायता कर सब ठीकठाक कर देते हो।" बाबा ने उत्तर दिया कि, "तुम्हें ज्ञात होगा कि कर्म पथ अति रहस्यपूर्ण है। यद्यपि मैं कुछ भी नहीं करता, फिर भी लोग मुझे ही कर्मों के लिये दोषी ठहराते हैं। मैं तो एक दर्शक मात्र ही हूँ। **केवल ईश्वर ही एक सत्ताधारी और प्रेरणा देने वाले हैं। वे ही परम दयालु हैं। मैं न तो ईश्वर हूँ और न मालिक, केवल उनका एक आज्ञाकारी सेवक ही हूँ और सदैव उनका स्मरण किया करता हूँ। जो निरभिमान होकर अपने को कृतज्ञ समझ कर उन पर पूर्ण विश्वास करेगा, उसके कष्ट दूर हो जायेंगे और उसे मुक्ति की प्राप्ति होगी।"**

ईरानी कन्या

अब एक ईरानी भद्र पुरुष का अनुभव पढ़िये। उनकी छोटी कन्या घंटे-घंटे पर मूर्च्छित हो जाया करती थी। जब दौरा पड़ता, तब उसमें बोलने की भी शक्ति शेष न रह जाती थी। उसके दाँत बैठ जाते थे। उसके हाथ-पैर ऐंठ जाते और वह बेहोश होकर भूमि पर गिर पड़ती थी। जब नाना प्रकार के उपचारों से भी उसे कोई लाभ न हुआ, तब कुछ लोगों ने उस ईरानी से बाबा की उदी की बहुत प्रशंसा की और कहा कि वह विलेपार्ला (बम्बई) में काकासाहेब दीक्षित के पास से ही प्राप्त हो सकती है। तब ईरानी महाशय ने वहाँ से उदी लाकर जल में घोलकर अपनी बेटी को पिलाया। प्रारम्भ में जो दौरे एक घंटे के अन्तर से आया करते थे, बाद में वे सात घंटे के अन्तर से आये और कुछ दिनों के पश्चात् तो वह पूर्ण स्वस्थ हो गई।

हरदा के महानुभाव

हरदा के एक महानुभाव पथरी रोग से ग्रस्त थे। यह पथरी केवल शल्यचिकित्सा द्वारा ही निकाली जा सकती थी। लोगों ने भी उन्हें ऐसा ही करने का परामर्श दिया। वे बहुत ही वृद्ध तथा दुर्बल थे और अपनी दुर्बलता देखकर उन्हें शल्यचिकित्सा कराने का साहस न हो रहा था। इस हालत में उनकी व्याधि का और इलाज ही क्या था? इसी समय नगर के इनामदार भी वहाँ आये हुए थे, जो बाबा के परम भक्त थे तथा उनके पास उदी भी थी। कुछ मित्रों के परामर्श देने पर उनके पुत्र ने उनसे कुछ उदी प्राप्त कर अपने वृद्ध पिता को जल में मिलाकर पीने को दी। केवल पाँच मिनट में ही उदी के पेट में जाते ही पथरी मल-मूत्रेन्द्रिय के द्वार से बाहर निकल गई और वह वृद्ध शीघ्र ही स्वस्थ हो गया।

बम्बई की महिला की प्रसव-पीड़ा

बम्बई की कायस्थ प्रभु जाति की एक महिला को प्रसव-काल में असहनीय वेदना हुआ करती थी। जब वह गर्भवती हो जाती तो बहुत घबराती और किंकर्तव्यमूढ़ हो जाया करती थी। इसके उपचारार्थ उनके एक मित्र श्रीराम मारुति ने उसके पति को सुझाव दिया कि यदि इस पीड़ा से मुक्ति चाहते हो तो अपनी पत्नी को शिरडी ले जाओ।

दुबारा जब उनकी स्त्री गर्भवती हुई तो वे दोनों पति-पत्नी शिरडी आये और वहाँ कुछ मास ठहरे। वे बाबा की नित्य सेवा करने लगे। उन्हें बाबा के सत्संग का भी बहुत कुछ लाभ हुआ। कुछ दिनों के पश्चात् जब प्रसव-काल समीप आया, तब सदैव की भाँति गर्भाशय के द्वार में रुकावट के साथ अधिक वेदना होने लगी। उनकी समझ में नहीं आता था कि अब क्या करना चाहिये? थोड़ी ही देर में एक पड़ोसिन आई और उसने मन ही मन बाबा से सहायता की प्रार्थना कर जल में उदी मिला उसे पीने को दी। तब केवल पाँच मिनिट में ही बिना किसी कष्ट के प्रसव हो गया। बालक तो अपने भाग्यानुसार ही उत्पन्न हुआ, परन्तु उसकी माँ की पीड़ा और कष्ट सदा के लिये दूर हो गये। वे अपने को बाबा का बड़ा कृतज्ञ समझने लगे और जीवनपर्यंत उनके आभारी बने रहे।

॥ श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥

अध्याय - ३५

परीक्षा में असफल

काका महाजनी के मित्र और सेठ, निर्बीज मुनक्के; बान्द्रा निवासी एक गृहस्थ की नींद न आने की घटना; बालाजी पाटील नेवासकर; बाबा का सर्प के रूप में प्रगट होना।

इस अध्याय में भी उदी का माहात्म्य ही वर्णित है। इसमें ऐसी दो घटनाओं का उल्लेख है कि परीक्षा करने पर देखा गया कि बाबा ने दक्षिणा अस्वीकार कर दी। पहले इन घटनाओं का वर्णन किया जायेगा।

आध्यात्मिक विषयों में साम्प्रदायिक प्रवृत्ति उन्नति के मार्ग में एक बड़ा रोड़ा है। निराकारवादियों से कहते सुना जाता है कि ईश्वर की सगुण उपासना केवल एक भ्रम ही है और संतगण भी अपने सदृश ही सामान्य पुरुष हैं। इस कारण उनकी चरण वन्दना कर उन्हें दक्षिणा क्यों देनी चाहिए? अन्य पन्थों के अनुयायियों का भी ऐसा ही मत है कि अपने सद्‌गुरु के अतिरिक्त अन्य सन्तों को नमन तथा उनकी भक्ति न करनी चाहिए। इसी प्रकार की अनेक आलोचनायें साईबाबा के सम्बंध में पहले सुनने में आया करती थीं तथा अभी भी आ रही हैं। किसी का कथन था कि जब हम शिरडी को गये तो बाबा ने हमसे दक्षिणा माँगी। क्या इस भाँति दक्षिणा ऐंठना एक सन्त के लिये शोभनीय था? जब वे इस प्रकार आचरण करते हैं तो फिर उनका साधु-धर्म कहाँ रहा? परन्तु ऐसी भी कई घटनाएँ अनुभव में आई हैं कि जिन लोगों ने शिरडी जाकर अविश्वास से बाबा के दर्शन किये, उन्होंने ही सर्वप्रथम बाबा को प्रणाम कर प्रार्थना भी की। ऐसे ही कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं।

काका महाजनी के मित्र

काका महाजनी के मित्र निराकारवादी तथा मूर्त्ति-पूजा के सर्वथा विरुद्ध थे। कौतूहलवश वे काका महाजनी के साथ दो शर्त्तों पर शिरडी चलने को सहमत हो गये

कि (१) बाबा को नमस्कार न करेंगे और (२) न कोई दक्षिणा ही उन्हें देंगे। जब काका ने स्वीकारात्मक उत्तर दे दिया, तब फिर शनिवार की रात्रि को उन दोनों ने बम्बई से प्रस्थान कर दिया और दूसरे ही दिन प्रातःकाल शिरडी पहुँच गये। जैसे ही उन्होंने मसजिद में पैर रखा, उसी समय बाबा ने उनके मित्र की ओर थोड़ी देर देखकर उनसे कहा कि "अरे आइये, श्रीमान् पधारिए। आपका स्वागत है।" इन शब्दों का स्वर कुछ विचित्र-सा था और उनकी ध्वनि प्रायः उन मित्र के पिता के बिलकुल अनुरूप ही थी। तब उन्हें अपने कैलासवासी पिता की स्मृति हो आई और वे आनन्द विभोर हो गये। क्या मोहिनी थी उस स्वर में? आश्चर्ययुक्त स्वर में उनके मित्र के मुख से निकल पड़ा कि निस्संदेह यह स्वर मेरे पिताजी का ही है। तब वे शीघ्र ही ऊपर दौड़कर गये और अपनी सब प्रतिज्ञायें भूलकर उन्होंने बाबा के श्री-चरणोंपर अपना मस्तक रख दिया।

बाबा ने काकासाहेब से तो दोपहर में तथा विदाई के समय दो बार दक्षिणा माँगी, परन्तु इनके मित्र से एक शब्द भी न कहा। उनके मित्र ने फुसफुसाते हुए कहा कि "भाई! देखो, बाबा ने तुमसे तो दो बार दक्षिणा माँगी, परन्तु मैं भी तो तुम्हारे साथ हूँ, फिर वे मेरी इसप्रकार उपेक्षा क्यों करते हैं?" काका ने उत्तर दिया कि "उत्तम तो यह होगा कि तुम स्वयं ही बाबा से यह पूछ लो।" बाबा ने पूछा कि "यह क्या कानाफूसी हो रही है?" तब उनके मित्र ने कहा कि "क्या मैं भी आपको दक्षिणा दूँ।" बाबा ने कहा कि "तुम्हारी अनिच्छा देखकर मैंने तुमसे दक्षिणा नहीं माँगी, परन्तु यदि तुम्हारी इच्छा ऐसी ही है तो तुम दक्षिणा दे सकते हो।" तब उन्होंने सत्रह रुपये भेंट किये, जितने काका ने दिये थे। तब बाबा ने उन्हें उपदेश दिया कि "**अपने मध्य जो तेली की दीवाल (भेदभाव) है, उसे नष्ट कर दो, जिससे हम परस्पर देखकर अपने मिलन का पथ सुगम बना सकें।**" बाबा ने उन्हें लौटने की अनुमति देते हुए कहा कि "तुम्हारी यात्रा सफल रहेगी।" यद्यपि आकाश में बादल छाये हुए थे और वायु वेग से चल रही थी तो भी दोनों सकुशल बम्बई पहुँच गये। घर पहुँचकर जब उन्होंने द्वार तथा खिड़कियाँ खोलीं तो वहाँ दो मृत चमगादड़ पड़े देखे। एक तीसरा उनके सामने ही फुर्र करके खिड़की में से उड़ गया। उन्हें विचार आया कि यदि मैंने खिड़की खुली छोड़ी होती तो इन जीवों के प्राण अवश्य बच गये होते, परन्तु फिर उन्हें विचार आया कि यह उनके भाग्यानुसार ही हुआ है और बाबा ने तीसरे की प्राण-रक्षा के हेतु हमें शीघ्र ही वहाँ से वापस भेज दिया है।

काका महाजनी के सेठ

बम्बई में ठक्कर धरमसी जेठाभाई सॉलिसिटर (कानूनी सलाहकार) की एक फर्म

थी। काका इस फर्म के व्यवस्थापक थे। सेठ और व्यवस्थापक के सम्बन्ध परस्पर अच्छे थे। श्रीमान् ठक्कर को ज्ञात था कि काका बहुधा शिरडी जाया करते हैं और वहाँ कुछ दिन ठहरकर बाबा की अनुमति से ही वापस लौटते हैं। कौतूहलवश बाबा की परीक्षा करने के विचार से उन्होंने भी होलिकोत्सव के अवसर पर काका के साथ ही शिरडी जाने का निश्चय किया। काका का शिरडी से लौटना सदैव अनिश्चित सा ही रहता था, इसलिये अपने साथ एक मित्र को लेकर वे तीनों रवाना हो गये। मार्ग में काका ने बाबा को अर्पित करने के हेतु दो सेर मुनक्का मोल ले लिया। ठीक समय पर शिरडी पहुँच कर वे उनके दर्शनार्थ मसजिद में गये। बाबासाहेब तर्खड भी तब वहीं पर थे। श्री. ठक्कर ने उनसे आने का हेतु पूछा। तर्खड ने उत्तर दिया कि मैं तो दर्शनों के लिये ही आया हूँ। मुझे चमत्कारों से कोई प्रयोजन नहीं। यहाँ तो भक्तों की हार्दिक इच्छाओं की पूर्त्ति होती है। काका ने बाबा को नमस्कार कर उन्हें मुनक्के अर्पित किये। तब बाबा ने उन्हें वितरित करने की आज्ञा दे दी। श्रीमान् ठक्कर को भी कुछ मुनक्के मिले। एक तो उन्हें मुनक्का रुचिकर न लगता था, दूसरे इस प्रकार अस्वच्छ खाने की डॉक्टर ने मनाही कर दी थी। इसलिये वे कुछ निश्चय न कर सके और अनिच्छा होते हुए भी उन्हें ग्रहण करना पड़ा और फिर दिखावे मात्र के लिये ही उन्होंने मुँह में डाल लिया। अब समझ में न आता था कि उनके बीजों का क्या करें। मसजिद की फर्श पर तो थूका नहीं जा सकता था, इसलिये उन्होंने वे बीज अपनी इच्छा के विरुद्ध अपने खीसे में डाल लिये और सोचने लगे कि जब बाबा सन्त हैं तो यह बात उन्हें कैसे अविदित रह सकती है कि मुझे मुनक्कों से घृणा है? फिर क्या वे मुझे इसके लिये लाचार कर सकते हैं? जैसे ही यह विचार उनके मन में आया, बाबा ने उन्हें कुछ और मुनक्के दिये, पर उन्होंने खाया नहीं और अपने हाथ में ले लिया। तब बाबा ने उन्हें खा लेने को कहा। उन्होंने आज्ञा का पालन किया और चबाने पर देखा कि वे सब निर्बीज हैं। वे चमत्कार की इच्छा रखते थे, इसलिये उन्हें देखने को भी मिल गया। उन्होंने सोचा कि बाबा समस्त विचारों को तुरन्त जान लेते हैं और मेरी इच्छानुसार ही उन्होंने उन्हें बीजरहित बना दिया है। क्या अद्भुत शक्ति है उनमें? फिर शंका-निवारणार्थ उन्होंने तर्खड से, जो समीप ही बैठे हुये थे और जिन्हें भी थोड़े मुनक्के मिले थे, पूछा कि किस किस्म के मुनक्के तुम्हें मिले? उत्तर मिला "अच्छे बीजों वाले।" श्रीमान् ठक्कर को तब और भी आश्चर्य हुआ। अब उन्होंने अपने अंकुरित विश्वास को दृढ़ करने के लिये मन में निश्चय किया कि यदि बाबा वास्तव में सन्त हैं तो अब सर्वप्रथम मुनक्के काका को ही दिये जाने चाहिये। इस विचार को जानकर बाबा ने कहा कि अब पुनः वितरण काका से ही आरम्भ होना चाहिये। यह सब प्रमाण श्री. ठक्कर के लिये पर्याप्त ही थे।

फिर शामा ने बाबा से परिचय कराया कि आप ही काका के सेठ हैं। बाबा कहने लगे कि ये उनके सेठ कैसे हो सकते हैं? इनके सेठ तो बड़े विचित्र हैं। काका इस उत्तर से सहमत हो गये। अपनी हठ छोड़कर ठक्कर ने बाबा को प्रणाम किया और वाड़े को लौट आये। मध्याह्न की आरती समाप्त होने के उपरान्त वे बाबा से प्रस्थान करने की अनुमति प्राप्त करने के लिये मसजिद में आये। शामा ने उनकी कुछ सिफारिश की, तब बाबा इस प्रकार बोलेः–

"एक सनकी मस्तिष्क वाला सभ्य पुरुष था, जो स्वस्थ और धनी भी था। शारीरिक तथा मानसिक व्यथाओं से मुक्त होने पर भी वह स्वतःही अनावश्यक चिंताओं में डूबा रहता और व्यर्थ ही यहाँ-वहाँ भटक कर अशान्त बना रहता था। कभी वह स्थिर और कभी चिन्तित रहता था। उसकी ऐसी स्थिति देखकर मुझे दया आ गई और मैंने उससे कहा कि कृपया अब **आप अपना विश्वास एक इच्छित स्थान पर स्थिर कर लें। इस प्रकार व्यर्थ भटकने से कोई लाभ नहीं।**"

"शीघ्र ही एक निर्दिष्ट स्थान चुन लो" – इन शब्दों से ठक्कर की समझ में तुरन्त आ गया कि यह सर्वथा मेरी ही कहानी है। उनकी इच्छा थी कि काका भी हमारे साथ ही लौटें। बाबा ने उनका ऐसा विचार जानकर काका को सेठ के साथ ही लौटने की अनुमति दे दी। किसी को विश्वास न था कि काका इतने शीघ्र शिरडी से प्रस्थान कर सकेंगे। इस प्रकार ठक्कर को बाबा की विचार जानने की कला का एक और प्रमाण मिल गया।

तब बाबा ने काका से १५ रुपये दक्षिणा माँगी और कहने लगे कि "यदि मैं किसी से एक रुपया दक्षिणा लेता हूँ तो उसे दसगुना लौटाया करता हूँ। मैं किसी की कोई वस्तु बिना मूल्य नहीं लेता और न तो प्रत्येक से माँगता ही हूँ। जिसकी ओर फकीर (मेरे गुरु) इंगित करते हैं, उससे ही मैं माँगता हूँ और जो गत जन्म का ऋणी होता है, उसकी ही दक्षिणा स्वीकार हो जाती है। **दानी देता है और भविष्य में सुन्दर उपज का बीजारोपण करता है।** धन का उपयोग धर्मोपार्जन के ही निमित्त होना चाहिये। यदि धन व्यक्तिगत आवश्यकताओं में व्यय किया गया तो यह उसका दुरुपयोग है। यदि तुमने पूर्व जन्मों में दान नहीं दिया है तो इस जन्म में पाने की आशा कैसे कर सकते हो? इसलिये **यदि प्राप्ति की आशा रखते हो तो अभी दान करो।** दक्षिणा देने से वैराग्य की वृद्धि होती है और वैराग्य प्राप्ति से भक्ति और ज्ञान बढ़ जाते हैं। **एक दो और दस गुना लो।**

इन शब्दों को सुनकर श्री. ठक्कर ने भी अपना संकल्प भूलकर बाबा को पन्द्रह रुपये भेंट किये। उन्होंने सोचा कि अच्छा ही हुआ, जो मैं शिरडी आ गया। यहाँ मेरे सब सन्देह नष्ट हो गये और मुझे बहुत कुछ शिक्षा प्राप्त हो गई।

ऐसे विषयों में बाबा की कुशलता बड़ी अद्वितीय थी। यद्यपि वे सब कुछ करते थे, फिर भी वे इन सबसे अलिप्त रहते थे। नमस्कार करने या न करने वाले; दक्षिणा देने या न देने वाले; दोनों ही उनके लिए एक समान थे। उन्होंने कभी किसी का अनादर नहीं किया। यदि भक्त उनका पूजन करते तो इससे उन्हें न कोई प्रसन्नता होती और यदि कोई उनकी उपेक्षा करता तो न कोई दुःख ही होता। वे सुख और दुःख की भावना से परे हो चुके थे

अनिद्रा

बान्द्रा के एक महाशय कायस्थ प्रभु बहुत दिनों से नींद न आने के कारण अस्वस्थ थे। जैसे ही वे सोने लगते, उनके स्वर्गवासी पिता स्वप्न में आकर उन्हें बुरी तरह गालियाँ देते दिखने लगते थे। इससे निद्रा भंग हो जाती और वे रात्रिभर अशांति महसूस करते थे। हर रात्रि को ऐसा ही होता था, जिससे वे किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो गये। एक दिन बाबा के एक भक्त से उन्होंने इस विषय में परामर्श किया। उसने कहा कि मैं तो संकटमोचन सर्व-पीड़ा-निवारिणी उदी को ही इसकी रामबाण औषधि मानता हूँ, जो शीघ्र ही लाभदायक सिद्ध होगी। उन्होंने एक उदी की पुड़िया देकर कहा कि इसे शयन के पूर्व माथे पर लगाकर अपने सिरहाने रखो। फिर तो उन्हें निर्विघ्न प्रगाढ़ निद्रा आने लगी। यह देखकर उन्हें महान् आश्चर्य और आनन्द हुआ। यह क्रम चालू रखकर वे अब साईबाबा का ध्यान करने लगे। बाजार से उनका एक चित्र लाकर उन्होंने अपने सिरहाने के पास लगाकर उनका नित्य पूजन करना प्रारम्भ कर दिया। प्रत्येक गुरुवार को वे हार और नैवेद्य अर्पण करने लगे। वे अब पूर्ण स्वस्थ हो गये और पहले के सारे कष्टों को भूल गये।

बालाजी पाटील नेवासकर

ये बाबा के परम भक्त थे। ये उनकी निष्काम सेवा किया करते थे। दिन में जिन रास्तों से बाबा निकलते थे, उन्हें वे प्रातःकाल ही उठकर झाड़ू लगाकर पूर्ण स्वच्छ रखते थे। इनके पश्चात् यह कार्य बाबा की एक परमभक्त महिला राधाकृष्ण माई ने किया और फिर अब्दुल ने। बालाजी जब अपनी फसल काटकर लाते तो वे सब अनाज उन्हें भेंट

कर दिया करते थे। उसमें से जो कुछ बाबा उन्हें लौटा देते, उसी से वे अपने कुटुम्ब का भरणपोषण किया करते थे। यह क्रम अनेक वर्षों तक चला और उनकी मृत्यु के पश्चात् भी उनके पुत्र ने इसे जारी रखा।

उदी की शक्ति और महत्त्व

एक बार बालाजी के श्राद्ध दिवस की वार्षिकी (बरसी) के अवसर पर कुछ व्यक्ति आमंत्रित किये गये। जितने लोगों के लिये भोजन तैयार किया गया, उससे कहीं तिगुने लोग भोजन के समय एकत्रित हो गये। यह देख श्रीमती नेवासकर किंकर्तव्यविमूढ़-सी हो गईं। उन्होंने सोचा कि यह भोजन सबके लिये पर्याप्त न होगा और कहीं कम पड़ गया तो कुटुम्ब की भारी अपकीर्ति होगी। तब उनकी सास ने उनसे सान्त्वना-पूर्ण शब्दों में कहा कि चिन्ता न करो। यह भोजन-सामग्री हमारी नहीं, यह तो श्री साईबाबा की है। प्रत्येक बर्त्तन में उदी डालकर उन्हें वस्त्र से ढँक दो और बिना वस्त्र हटाये सबको परोस दो। वे ही हमारी लाज बचायेंगे। परामर्श के अनुसार ही किया गया। भोजनार्थियों के तृप्तिपूर्वक भोजन करने के पश्चात् भी भोजन सामग्री यथेष्ठ मात्रा में शेष देखकर उन लोगों को महान् आश्चर्य और प्रसन्नता हुई। यथार्थ में देखा जाय तो जैसा जिसका भाव होता है, उसके अनुकूल ही अनुभव प्राप्त होता है। ऐसी ही घटना मुझे प्रथम श्रेणी के उपन्यायाधीश तथा बाबा के परम भक्त श्री. बी.ए. चौगुले ने बतलाई। फरवरी, सन् १९४३ में करजत (जिला अहमदनगर) में पूजा का उत्सव हो रहा था, तभी इस अवसर पर एक बृहत् भोज का आयोजन हुआ। भोजन के समय आमंत्रित लोगों से लगभग पाँच गुने अधिक भोजन के लिये आये, फिर भी भोजन सामग्री कम नहीं हुई। बाबा की कृपा से सबको भोजन मिला, यह देख सबको आश्चर्य हुआ।

साईबाबा का सर्प के रूप में प्रगट होना

शिरडी के रघु पाटील एक बार नेवासे के बालाजी पाटील के पास गये, जहाँ सन्ध्या को उन्हें ज्ञात हुआ कि एक साँप फुफकारता हुआ गौशाला में घुस गया है। सभी पशु भयभीत होकर भागने लगे। घर के लोग भी घबरा गये, परन्तु बालाजी ने सोचा कि श्री साई ही इस रूप में यहाँ प्रगट हुए हैं। तब वे एक प्याले में दूध ले आये और निर्भय होकर उस सर्प के सम्मुख रखकर उनको इस प्रकार सम्बोधित कर कहने लगे कि "बाबा! आप फुफकार कर शोर क्यों कर रहे हैं? क्या आप मुझे भयभीत करना चाहते हैं? यह दूध का प्याला लीजिए और शांतिपूर्वक पी लीजिये" ऐसा कहकर वे बिना किसी

भय के उसके समीप ही बैठ गये। अन्य कुटुम्बी जन तो बहुत घबड़ां गये और उनकी समझ में न आ रहा था कि अब वे क्या करें? थोड़ी देर में ही सर्प अदृश्य हो गया और किसी को भी पता न चला कि वह कहाँ गया। गौशाला में सर्वत्र देखने पर भी वहाँ उसका कोई चिह्न न दिखाई दिया।

एक ऐसी ही घटना साई-सुधा (भाग ३ नं. ७-८, जनवरी ४३, पृष्ठ २६) में प्रकाशित है कि बाबा कोयंबटूर (दक्षिण भारत) में ७ जनवरी, सन् ४३ गुरुवार की सन्ध्या को साढ़े तीन बजे सर्प के रूप में प्रगट हुए, जहाँ उस सर्प ने भजनं सुनकर दूध और फूल स्वीकार किये तथा हजारों लोगों की भीड़ को दर्शन देकर अपनी फोटो भी उतारने दिया। फोटो उतारते समय, बाबा का चित्र भी उसके समीप रखकर दोनों की ही फोटो उतारी गई। चित्र और अन्य विवरण के लिये पाठकों से प्रार्थना है कि वे उपर्युक्त पत्रिका का अवश्य अवलोकन करें।

॥ श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥

● ● ●

सप्ताह पारायणः पंचम विश्राम

ॐ